IJAER/May-June 2016/Volume-5/Issue-3 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

परमाणु शक्ति का विश्व राजनीति पर प्रभाव

डॉ मंजुलता शर्मा

व्याख्याता-राजनीति विज्ञान

राजकीय महाविद्यालय निवाई टोंक राजस्थान

परमाणु शक्ति संपन्न राष्ट्रों ने अंतरराष्ट्रीय संबंधों में अपने राष्ट्रीय हितों को हासिल करने के लिए "एन-हथियारों के खतरे" का उपयोग करने की क्षमता प्राप्त की हैं। उन्हें गैर-परमाणु राज्यों के साथ संबंधों में अपने इच्छित उद्देश्यों को हासिल करने के लिए परमाणु युद्ध के खतरे का उपयोग करने की क्षमता मिली। परमाणु हथियार विशेष रूप से विनाशकारी खतरा पैदा करते हैं। सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए परमाणु हथियारों के प्रसार और उपयोग की रोकथाम तत्काल महत्वपूर्ण है। क्योंकि राष्ट्र-राज्य या अन्य संस्थाएं जो परमाणु हथियारों का उपयोग करना चाहते हैं या उपयोग करने की धमकी देते हैं, उन हथियारों को वितरित करने के लिए तरीकों की आवश्यकता होती है, वितरण तंत्र के प्रसार को भी रोका जाना चाहिए। प्रसार को नियंत्रित करना - और अंततः परमाणु हथियारों को समाप्त करना - इसमें राष्ट्रीय सरकारें, अंतर सरकारी संगठन, गैर सरकारी और पेशेवर संगठन और बड़े पैमाने पर समाज शामिल हैं।

परिचय:

अगर सहयोगी देशों के सुरक्षा की अमेरिकी गारंटी और कमजोर पड़ती है तो उन देशों को इसके लिए खुदख़ुद पहल करनी पड़ेगी और वे परमाणु हथियार बनाने के बारे में भी सोच सकते हैं। परमाणु अप्रसार 6 दशक से अधिक समय से दुनिया के लिए बड़ी चुनौती बना हुआ है, लेकिन इस दौरान इस समस्या के रूप बदलते गए हैं। ख़ासतौर पर शीत युद्ध के ख़त्म होने के बाद से इसमें काफ़ी बदलाव आया है। ग्लोबल न्यूक्लियर ऑर्डर के स्थापित होने के बाद से संभावित ख़तरों और सत्ता के संतुलन में व्यापक परिवर्तन हुआ और इस वजह से पहले की तुलना में परमाणु अप्रसार आज कहीं अधिक चुनौतीपूर्ण बन गया है। दस साल पहले से तुलना करें तो आज दुनिया में संघर्ष की आशंका बढ़ी है और क्षेत्रीय टकराव के कारण भी असुरक्षा बढ़ रही है। इस लेख में हम इसकी पड़ताल करेंगे कि वैश्विक और क्षेत्रीय संघर्षों का परमाणु अप्रसार पर क्या असर हो रहा है और इसकी बुनियाद में अंतरराष्ट्रीय समुदाय के बीच कौन सी सर्वसम्मति है।

हमें इस सच्चाई को स्वीकार करना होगा कि ज़्यादातर देशों के लिए परमाणु हथियार अंततः उनकी सुरक्षा से जुड़े हैं और परमाणु अप्रसार व्यवस्था की पेशकश को कमियों के बावजूद इसलिए स्वीकार किया गया क्योंकि इससे दुनिया ख़ुद को अधिक सुरक्षित महसूस करती है। इसके साथ इस पर भी ग़ौर करना होगा कि परमाणु अप्रसार के बारगेन का असर कम होने के साथ ऐसे देशों की संख्या बढ़ी है, जो परमाणु हथियार की क्षमता हासिल करने की कोशिश कर रहे हैं। शीत युद्ध के दौर में इस मामले में सिर्फ़ अमेरिका और सोवियत संघ की होड़ को लेकर आशंका रहती थी और लगता था कि इस वजह से वैश्विक परमाणु युद्ध शुरू हो जाएगा। हालांकि, आज इस ख़तरे में वेपंस ऑफ मास डिस्ट्रक्शन (WMD) यानी सामूहिक विनाश के हथियार, उनके डिलीवरी मैकेनिज्म यानी उन्हें छोड़ने वाली व्यवस्था-तकनीक और परमाणु आतंकवाद भी शामिल हो गए हैं। इस संदर्भ में चीन और पाकिस्तान के बीच परमाणु और मिसाइल के क्षेत्र में सहयोग और उत्तर कोरिया व ईरान में मिसाइल से जुड़ी गतिविधियों का ज़िक्रकरना भी ज़रूरी है। इनमें से हरेक का असर एशिया में सैन्य संतुलन पर पड़ा है।

परमाणु अप्रसार ऐसा क्षेत्र है, जिसमें सांस्थानिक स्तर पर तरक्की रुक गई है।[1] वैसे यह वैश्विक सुरक्षा के ढांचे की बुनियाद बना हुआ है, लेकिन इस मामले में सांस्थानिक स्तर पर ज़्यादातर प्रगति परमाणु अप्रसार व्यवस्था के पहले तीन दशकों में हुई थी। पिछले दो दशकों में इस क्षेत्र में मामूली प्रोग्रेस हुई है। 1970 से लेकर 1990 के बीच इस क्षेत्र में कई पहल हुईं। न्यूक्लियर सप्लायर्स ग्रुप (NSG) की स्थापना इस दौरान की गई। परमाणु तकनीक को नियंत्रित करने के लिए कदम उठाए गए। इसके साथ इंटरनेशनल एटॉमिक एनर्जी एजेंसी और अन्य प्रोटोकॉल के ज़रिये निगरानी व्यवस्था को मज़बूत बनाया गया। न्यूक्लियर ट्रांसफर को पूरी तरह सुरक्षित बनाने के लिए NSG रूल्स तक में बदलाव किए गए।

इसके बाद अमेरिका में बुश सरकार के कार्यकाल के दौरान यह ग़लत फ़ैसला लिया गया कि परमाणु अप्रसार के लिए एकतरफ़ा कदम कहीं कारगर साबित होंगे। इससे परमाणु अप्रसार की वैश्विक व्यवस्था बुरी तरह प्रभावित हुई। अमेरिका ने परमाणु और जनसंहार के हथियार रखने के बहाने को लेकर इराक के खिलाफ़ युद्ध शुरू किया और उसके बाद से परमाणु अप्रसार की वैश्विक व्यवस्था पहले की तरह काम नहीं कर पाई। इराक मामले की वजह से अमेरिका की वैचारिक और मैटीरियल पावर कम हुई, जिसके नतीजे आज तक महसूस किए जा रहे हैं। परमाणु अप्रसार व्यवस्था के किरदारों में भी बहुत बदलाव नहीं हुआ है। ये दुनिया के ताक़तवर देश हैं, ख़ासतौर पर P-5, जो N-5 यानी परमाणु हथियार संपन्न देश भी हैं। उनका परमाणु हथियार रखना वैध है। इस बीच, विकासशील देशों और ब्रिक्स (ब्राजील, रूस, इंडिया, चीन और साउथ अफ्रीका) और IBSA (इंडिया, ब्राजील और साउथ अफ्रीका) जैसे समूहों के उभार के बावज़ूद परमाणु अप्रसार व्यवस्था पर P-5 का नियंत्रण बना हुआ है।

बीच-बीच में कुछ अन्य किरदारों को भी इसमें जगह मिलती रही है, जैसा कि ईरान के साथ परमाणु मामले पर बातचीत के दौरान हुआ था। हालांकि, ये किरदार विंडो-ड्रेसिंग के लिए ही लाए जाते हैं। ये संजीदा प्लेयर नहीं होते। हालांकि, आने वाले दशकों में यह स्थिति बदल सकती है। वैश्विक सत्ता संतुलन में बदलाव और मौजूदा परमाणु अप्रसार व्यवस्था के और कमजोर होने से ऐसा होगा। क्या ऐसी स्थिति में नई परमाणु अप्रसार व्यवस्था बनाने के बारे में सोचा जाएगा? इस सवाल का जवाब तो भविष्य ही देगा, लेकिन ऐसी व्यवस्था बनाए जाने पर संदेह होता है। इस बीच, वैश्विक परमाणु अप्रसार व्यवस्था की हालत बेहद ख़राब है, जिसकी गवाही परमाणु अप्रसार समझौते (NPT) का हाल भी दे रहा है। दिलचस्प बात यह है कि वैश्विक परमाणु अप्रसार व्यवस्था के केंद्र में यही समझौता है। आइए इस पर एक नज़र डालते हैं।

एनपीटी: इवोल्यूशन और चुनौतियां

यह समझौता 1968 में हुआ था। परमाणु अप्रसार में यह कितना कारगर साबित हुआ है, इस पर सवालिया निशान लगा हुआ है। हालांकि कई लोग इसे लेकर पॉजिटिव राय रखते हैं। उनका मानना है कि यह संधि असरदार भूमिका निभा सकती है। NPT समर्थकों का कहना है कि यह समझौता अपने मक़सद में सफल रहा है क्योंकि परमाणु हथियार बनाने वाले देशों की संख्या सीमित है।अक्सर यह दलील भी दी जाती है कि NPT एकमात्र संधि है, जिसमें पांच न्यूक्लियर वेपन स्टेट्स (NWS) यानी परमाणु हथियार से लैस देशों के साथ अन्य कई देशों की भागीदारी रही है। इस संधि के आर्टिकल VI के प्रति प्रतिबद्धता के ज़रिये परमाणु अप्रसार एजेंडे में बना हुआ है। हालांकि, इसे लेकर नॉन-न्यूक्लियर वेपन स्टेट्स (NNWS) के बीच, ख़ासतौर पर इजिप्ट जैसे देशों और NWS के बीच मतभेद रहे हैं। हर पांच साल पर होने वाले रिव्यू कॉन्फ्रेंस में (रेवकॉन) में ये मतभेद सामने आते हैं। 2015 के NPT रिव्यू कॉन्फ्रेंस में भी ऐसा ही हुआ था।परमाणु हथियार संपन्न देशों का मानना रहा है कि स्थिति जस की तस बनाए रखी जाए। वे परमाणु हथियारों को ख़त्म करने की दिशा में कोई पहल नहीं करना चाहते। यहां तक कि वे इसके लिए लंबी अवधि की योजना बनाने तक को राजी नहीं हैं। इससे संकेत मिलता है कि इनमें से कई देश परमाणु हथियारों को 'ज़रूरी', 'जायज़' और 'सही' मानते हैं।

जब तक ये चुनिंदा देश अपने पास परमाणु हथियार रखने को सही ठहराते रहेंगे तो इसी आधार पर दूसरों को भी ऐसा कहने और करने का मौक़ा मिलता रहेगा।

जब तक ये चुनिंदा देश अपने पास परमाणु हथियार रखने को सही ठहराते रहेंगे तो इसी आधार पर दूसरों को भी ऐसा कहने और करने का मौक़ा मिलता रहेगा। नॉन-न्यूक्लियर देशों में से कुछ जायज़ सुरक्षा ख़तरों के कारण परमाणु हथियार बनाना और उसकी क्षमता हासिल करना चाहते हैं। ऐसे में पहले तो यह स्वीकार करना होगा कि NPT में कुछ ख़ामियां हैं। इस समझौते को मज़बूत बनाने की दिशा में यह पहला और ज़रूरी कदम होना चाहिए। मिसाल के लिए, ईरान और उत्तर कोरिया के संदर्भ में व्यवस्था की कमज़ोरी सामने आ जाती है। इससे यह भी पता चलता है कि NPT के ज़रिये इन देशों पर लगाम लगाने में सफलता नहीं मिली है।

परमाणु अप्रसार पर वैश्विक पहल को व्यापक नजरिया अपनाना होगा और उसे भारत जैसे देशों को साथ लाने के लिए इनोवेटिव रास्ते तलाशने होंगे। भारत परमाणु अप्रसार के विचार का हमेशा से समर्थक रहा है और वह इंटरनेशनल न्यूक्लियर ऑर्डर और एक्सपोर्ट कंट्रोल रिजीम के साथ जुड़ रहा है।

यह बात सही है कि दुनिया के कुछ ताक़तवर देश मिलकर जॉइंट कॉम्प्रिहेंसिव प्लान ऑन एक्शन (JCPOA) बनाने में सफल रहे, लेकिन इस डील को लेकर बातचीत और सहमति NPT फ्रेमवर्क के दायरे से बाहर बनी। इससे साफ तौर पर NPT की कमज़ोरी जाहिर होती है। उत्तर कोरिया के मामले में भी इस संधि की असफलता जगजाहिर है। 1990 के दशक में एकतरफ़ा अमेरिकी डील को कोरियाई परमाणु विवाद का स्थायी समाधान माना गया था, लेकिन इसके एक दशक बाद उत्तर कोरिया ने NPT से अलग होकर परमाणु हथियार बनाने का फ़ैसला किया। परमाणु अप्रसार संधि की चुनौतियां छिपी हुई नहीं हैं, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि इसे मज़बूत बनाने की कोशिश छोड़ दी जाए। इसके साथ परमाणु अप्रसार पर वैश्विक पहल को व्यापक नजरिया अपनाना होगा और उसे भारत जैसे देशों को साथ लाने के लिए इनोवेटिव रास्ते तलाशने होंगे। भारत परमाणु अप्रसार के विचार का हमेशा से समर्थक रहा है और वह इंटरनेशनल न्यूक्लियर ऑर्डर और एक्सपोर्ट कंट्रोल रिजीम के साथ जुड़ रहा है। ऐसे कदम जोरशोर से उठाए जाने चाहिए ताकि वैश्विक परमाणु अप्रसार माध्यमों की अहमियत को फिर से स्थापित किया जा सके।

वैश्विक परमाणु अप्रसार व्यवस्था के सामने ईरान और उत्तर कोरिया जैसे संकट कोई पहली बार खड़े नहीं हुए हैं और ना ही वे इस तरह से आखिर संकट हैं। पहले जब भी इस तरह की समस्या खड़ी हुई, तब बड़ी ताक़तों ने इस व्यवस्था की समीक्षा की और उसे मज़बूत बनाया। NSG ने जिस तरह से शक्ल ली और जैसे उसकी स्थापना हुई, यह उसकी एक मिसाल है। भारत के 1974 में पहला परमाणु परीक्षण करने के बाद ग्लोबल न्यूक्लियर कम्युनिटी ने परमाणु अप्रसार के लिए नियम और कड़े किए। इसी तरह से जब यह पता चला कि इराक गोपनीय तरीके से परमाणु हथियार प्रोग्राम पर काम कर रहा है, तब परमाणु अप्रसार की ख़ातिर नियमों को दुरुस्त किया गया और इससे 1990 के दशक की शुरुआत में एडिशनल प्रोटोकॉल लागू हुए। इसी तरह से उत्तर कोरिया के NPT से बाहर निकलने के बाद इस पर चर्चा चल रही है कि क्या सभी देशों के लिए यह रास्ता बंद कर दिया जाए और किसी के पास संधि से पीछे हटने का अधिकार न रहे। हालांकि, अभी तक इस पर बहुत काम नहीं हुआ है। इधर, दुनिया की बड़ी ताक़तों के बीच गहरे मतभेद के कारण परमाणु अप्रसार व्यवस्था के सामने बड़ा जोख़िम पैदा हो गया है। ये देश परमाणु हथियारों के प्रसार को रोकने के लिए एक दूसरे के साथ पर्याप्त सहयोग नहीं कर रहे हैं और उसकी वजह यह है कि अधिक ताक़तवर बनने के लिए उनके बीच मुकाबला चल रहा है।

पावर पॉलिटिक्स की वापसी

ताकत के इस खेल से मौजूदा परमाणु प्रसार व्यवस्था प्रभावित हो रही है। इसमें मुख्य चुनौती यह है कि इस खेल में नए देशों के पावर हासिल करने के साथ परमाणु अप्रसार से जुड़ी बहस कहीं अधिक चुनौतीपूर्ण हो जाती है। नई वैश्विक व्यवस्था में होड़, प्रतिद्वंद्विता, अराजकता और संघर्ष बढ़ रहे हैं। अभी तक हम जिस वैश्विक राजनीतिक और सामरिक व्यवस्था को देखते आए हैं, उसकी खास बात कई देशों के बीच गठजोड़, नियम आधारित एंगेजमेंट और अंतराष्ट्रीय कानून का सम्मान रहा है, लेकिन अब इन पर दबाव बढ़ रहा है। दुनिया समझती थी कि अंतरराष्ट्रीय उदार व्यवस्था उसका अधिकार है, जो कि सच नहीं है। जब तक इसे मौजूदा सिद्धांतों और व्यवस्था के आधार पर मज़बूत नहीं बनाया जाता और बरकरार रखने की कोशिश नहीं होती, तब तक इसके ख़त्म होने की आशंका से इनकार नहीं किया जा सकता। इस इंटरनेशनल लिबरल ऑर्डर को बनाए रखने के लिए सोची-समझी रणनीति बनाकर उस पर काम करना होगा। अगर अमेरिका कमजोर होता है तो वह कई देशों के लिए अच्छा नहीं होगा। अगर उसकी जगह चीन लेता है तो उससे हलचल मचना तय है क्योंकि वह इस अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था के मौजूदा नियमों को चुनौती देना चाहेगा। हालांकि, आज परमाणु अप्रसार व्यवस्था जिन चुनौतियों का सामना कर रही है, उसके लिए सिर्फ़ चीन को दोष देना भी ठीक नहीं होगा।

वह नहीं चाहता कि यह व्यवस्था कमजोर हो। चीन इससे पैदा होने वाले ख़तरों को स्वीकार करने को तैयार नहीं है और ना ही उसे ये मंज़ूर हैं। उसकी वजह यह है कि चीन दुनिया को पावर-सेंट्रिक नज़रिये से देखता है।

भारत को NSG का सदस्य बनाए जाने को लेकर चीन का जो रवैया रहा है, इसे उससे भी समझा जा सकता है। इस ग्रुप में भारत के शामिल होने की राह में चीन सबसे बड़ी बाधा बना हुआ है। भारत की NSG मेंबरशिप की दावेदारी का चीन ने भले ही तकनीकी भाषा में विरोध किया हो, लेकिन सच तो यह है कि वह राजनीतिक कारणों से ऐसा कर रहा है।इस विरोध की वजह चीन की परमाणु अप्रसार के प्रति प्रतिबद्धता नहीं है और न ही इसके सिद्धांतों और व्यवस्था को बनाए रखने में उसकी दिलचस्पी है। असल में चीन को लगता है कि अगर भारत को NSG की सदस्यता मिल जाती है तो वह उसकी बराबरी पर आ जाएगा। और अभी तक जो दुनिया भारत को पाकिस्तान से जोड़कर देखती आई है, वह ऐसा करना बंद कर देगी।

यह बात छिपी नहीं है कि दुनिया की सारी बड़ी ताक़तों की दिलचस्पी अपने हितों को बढ़ाने में है। ख़ासतौर पर ग्लोबल गवर्नेंस के मंचों पर वे इसी इरादे के साथ काम करते हैं। भले ही ये देश अपने राष्ट्रीय हित में काम कर रहे हों, लेकिन अपनी भलाई की उनकी सोच को अगर इस तरह से मोड़ा जा सके, जिससे अंतरराष्ट्रीय समुदाय का भी हित सधे तो उससे अच्छी बात भला क्या होगी। यही वजह है कि शीत युद्ध के दौर में जब सोवियत रूस और अमेरिका के बीच मुकाबला चरम पर था, तब भी दोनों ने परमाणु अप्रसार के क्षेत्र में मिलकर काम किया। दोनों ही देशों ने वैश्विक परमाणु अप्रसार व्यवस्था का समर्थन किया। हालांकि, संकीर्ण राष्ट्रीय हितों को अंतरराष्ट्रीय समुदाय की बेहतरी में बदलने की अहमियत अभी तक चीन के नेतृत्व ने नहीं समझी है। एक और बात है, जो बदलती अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था से जुड़ी है। अमेरिका भले ही आज भी दुनिया का सबसे ताक़तवर देश बना हुआ है, लेकिन पहले की तुलना में उसकी पावर घटी है। इसका इस पर असर पड़ेगा कि परमाणु अप्रसार को लेकर वह दुनिया का नेतृत्व करने में कितनी दिलचस्पी रखता है। भले ही परमाणु अप्रसार संधि कई देशों की साझा पहल है, लेकिन इसे मज़बूत बनाने और आगे बढ़ाने के लिए किसी एक देश के नेतृत्व की जरूरत है। ऐसे में अगर परमाणु अप्रसार को विश्वसनीय लीडरशिप नहीं मिलती है तो भविष्य में इस व्यवस्था को मज़बूत बनाने में दिक़्क़त होगी।कई लोगों को लगता है कि ट्रंप सरकार के आने के बाद दुनिया का नेतृत्व करने की अमेरिका की क्षमता कमजोर हुई है, जबकि सच यह है कि इसके संकेत पहले से ही मिलने शुरू हो गए थे। इस ट्रेंड की शुरुआत बराक ओबामा के अमेरिका का राष्ट्रपति बनने के साथ हुई थी, जो सत्ता में मल्टीलेटरलिज्म के नारे के साथ आए थे। इससे एक हद तक इराक और अफगानिस्तान में अमेरिका को सैन्य मौजूदगी घटाने में मदद भी मिली। हालांकि, ओबामा सरकार के साथ दिक़्क़त यह थी कि उसने इस सोच को बेहद गंभीरता से लेना शुरू कर दिया। इसका

नतीजा यह हुआ कि चीन जैसी अन्य ताक़तों को दबदबा बढ़ाने का मौक़ा मिला। अमेरिका के कमजोर होने की इस अवधारणा को ट्रंप सरकार ने भी बढ़ावा दिया। इससे उसकी लीडरशिप को लेकर आशंकाएं बढ़ीं। ख़ासतौर पर अमेरिका के सहयोगी देशों के मन में संदेह पैदा हुआ। इनमें से कइयों के पास परमाणु हथियार बनाने की तकनीकी और औद्योगिक क्षमता है, लेकिन अभी तक सुरक्षा के लिए वे अमेरिका पर आश्रित थे। उन्होंने यह फ़ैसला सोच-समझकर लिया था क्योंकि इसकी लागत कम थी और यह सुरक्षित दांव भी था। ओबामा सरकार से शुरू हुई और ट्रंप सरकार के दौरान बरकरार इस नीति से कई क्षेत्रीय ताक़तों को लग रहा है कि उन्हें उनके हाल पर छोड़ दिया गया है और उन्हें अपनी सुरक्षा ज़रूरतों का ख़ुद ही ख्याल करना पड़ेगा। अगर सहयोगी देशों के सुरक्षा की अमेरिकी गारंटी और कमजोर पड़ती है तो उन देशों को इसके लिए ख़ुद पहल करनी पड़ेगी और वे परमाणु हथियार बनाने के बारे में भी सोच सकते हैं। अगर ऐसा हुआ तो इससे परमाणु अप्रसार व्यवस्था और कमजोर होगी।

दूसरी तरफ, परमाणु सुरक्षा ऐसा क्षेत्र है, जिसे लेकर दुनिया की बड़ी ताक़तों और कुछ हद तक ओबामा के शासनकाल के दौरान अमेरिकी नेतृत्व ने एडजस्टमेंट किया है। अमेरिकी लीडरशिप के कारण ही चार सफल परमाणु सुरक्षा सम्मेलन हुए। सम्मेलनों की प्रक्रिया अब पूरी हो चुकी है और न्यूक्लियर सिक्योरिटी पर सहयोग जारी रहेगा। इससे परमाणु अप्रसार के उपायों को भी जोड़ा जा सकता है, जिससे वैश्विक परमाणु अप्रसार पहल का प्रभाव और बढ़ सकता है।

सत्ता के संतुलन में बदलाव के कारण परमाणु अप्रसार व्यवस्था प्रभावित हुई है और इस मामले में तीसरी चुनौती खड़ी हो गई है। यह चुनौती परमाणु हथियारों को दी जा रही अहमियत के कारण खड़ी हुई है। NWS की रणनीति और परमाणु योजना में यह स्पष्ट तौर पर दिख रहा है। यूं तो परमाणु हथियारों की संख्या में नाटकीय ढंग से बढ़ोतरी नहीं हो रही है, लेकिन NWS की ओर से इससे दूर जाने की पहल भी नहीं हुई है। इस क्लब में शामिल सभी देश अपने परमाणु हथियार को आगे भी बनाए रखने पर आमादा हैं। दूसरी तरफ, चीन, रूस और अमेरिका अपने परमाणु हथियारों को आधुनिक और अधिक सक्षम बनाने पर भी काम कर रहे हैं। नई मिसाइलें और वॉरहेड बनाए जा रहे हैं। न्यूक्लियर स्ट्रैटेजी को लेकर भी एक किस्म का दुस्साहस दिख रहा है। मिसाल के लिए, यूं तो चीन ने पहले परमाणु हथियार का इस्तेमाल नहीं करने का सिद्धांत अपनाया हुआ है, लेकिन वह लगातार ऐसे नए हथियार और उसे सपोर्ट देने वाला इंफ्रास्ट्रक्चर तैयार कर रहा है। इस बीच, चीन में 'नो फर्स्ट यूज' पॉलिसी को लेकर अंदरूनी बहस भी छिड़ी हुई है। ऐसे में उसके न्यूक्लियर प्लान से बेचैनी बढ़ना स्वाभाविक है।

इसी तरह, रूस भी अपनी सामरिक तैयारियों में परमाणु हथियारों पर जोर बढ़ा रहा है।इंटरमीडियट-रेंज न्यूक्लियर फोर्सेज (INF) संधि को लेकर रूस के 'छल' की वजह से अब अमेरिका को भी जवाब देने को मजबूर होना पड़ा है। परमाणु हथियारों को नियंत्रित करने के लिहाज़ से यह सफल संधियों में से एक रही है। इसकी वजह से न्यूक्लियर वेपन की एक पूरी कैटिगरी ख़त्म हो गई। ऐसा भी नहीं है कि INF के साथ कोई समस्या नहीं है। इसे ऐसे समय में मूर्त रूप दिया गया था, जब चीन और उसके परमाणु हथियारों को खतरा नहीं माना जाता था। इसलिए इस संधि के दायरे में चीन के परमाणु हथियार नहीं आते। ना ही किसी अन्य देश के परमाणु हथियार इस समझौते के दायरे में आते हैं। INF अमेरिका और सोवियत रूस के बीच हुई द्विपक्षीय संधि थी। शीत युद्ध ख़त्म होने के बाद अमेरिका और रूस ने परमाणु हथियारों की संख्या घटाई है और इस बीच चीन की परमाणु क्षमता और ताकत बढ़ी है। वह बिना किसी रुकावट के इंटरमीडियट रेंज की मिसाइलें तैनात कर रहा है और यह अमेरिका और रूस दोनों के लिए चिंता का विषय रहा है। इसके बावजूद अगर INF संधि को ख़त्म कर दिया जाता है तो इससे फायदे के बजाय कहीं अधिक नुकसान होगा। ख़ासतौर पर यह देखते हुए कि NNWS की दिलचस्पी अपने परमाणु हथियारों को ख़त्म करने में नहीं है। दूसरी तरफ, अगर चीन की भागीदारी वाली INF आर्म्स रेस शुरू होती है तो इससे दूसरे देशों की परमाणु हथियारों की क्षमता हासिल करने में दिलचस्पी और बढ़ सकती है।

चौथी चुनौती ताक़तवर देशों के बीच सत्ता के संतुलन में बदलाव से खड़ी हुई है। कई देशों की राष्ट्रीय सुरक्षा की रणनीति में आज परमाणु हथियारों की अहमियत बढ़ रही है। हालांकि, अभी तक यह अधिक परमाणु हथियार तक सीमित रही है। फिलहाल, भारी संख्या में परमाणु हथियार हासिल करने पर उन देशों का जोर नहीं रहा है। इसके लिए कुछ हद तक NWS और चार परमाणु क्षमता से लैस देश भी दोषी हैं, जो अपनी सुरक्षा ज़रूरतों और योजनाओं में इन हथियारों पर लगातार जोर दे रहे हैं। क्षेत्रीय संघर्षों की वजह से भी न्यूक्लियर वेपन में दिलचस्पी बढ़ रही है। दरअसल, दुनिया के कई इलाकों में पारंपरिक सैन्य क्षमता के लिहाज़ से असंतुलन बढ़ रहा है। ख़ासतौर पर पश्चिम एशिया के साथ ऐसी दिक़्क़त दिख रही है। अगर ईरान भी परमाणु क्षमता हासिल कर लेता है तो पश्चिम एशिया में परमाणु हथियारों का प्रसार और बढ़ सकता है। तब सऊदी अरब जैसे देशों की दिलचस्पी इसमें बढ़ सकती है।

पूर्वी एशिया में क्षेत्रीय होड़ का नतीजा हथियारों की रेस के रूप में सामने आ रहा है। 2006 में उत्तर कोरिया ने पहला परमाणु विस्फोट किया था। उत्तर कोरिया दुनिया का इकलौता देश है, जो परमाणु हथियार बनाने के लिए NPT से अलग हो गया था। उसकी मिसाइल और परमाणु गतिविधियों के साथ चीन से बढ़ते ख़तरे का इस क्षेत्र के सामरिक मामलों पर महत्वपूर्ण असर हो सकता है। उत्तर कोरिया के साथ अमेरिका की बीच-बीच में होने वाली बातचीत से आगे चलकर शायद कभी कोरियाई महाद्वीप के परमाणु हथियार मुक्त होने की राह निकले, लेकिन अभी जो स्थिति दिख रही है, वह अच्छी नहीं है। अगर उत्तर कोरिया अपने परमाणु हथियार बनाए रखता है तो इससे जापान जैसे देशों के अपने नॉन-न्यूक्लियर स्टैंड पर पुनर्विचार करने का दबाव बढ़ सकता है। अगर जापान परमाणु हथियार बनाने का फ़ैसला करता है तो दक्षिण कोरिया भी बहुत पीछे नहीं रहेगा।[18] इसलिए क्षेत्रीय संघर्ष भी परमाणु हथियारों के प्रसार का जरिया बन रहे हैं। ख़ासतौर पर ऐसी स्थिति में जब एक देश के पास परमाणु हथियार हो और दूसरों के पास न हो। परमाणु हथियारों में दिलचस्पी दिखाने वाले कई देश ऐसे हैं, जो अभी तक परमाणु विरोधी ताक़तों के केंद्र रहे हैं।

इसमें भी कोई शक नहीं है कि परमाणु अप्रसार और सहयोगी देशों को अमेरिका की तरफ से मिली सुरक्षा गारंटी को संदेह की नज़र से देखा जा रहा है। परमाणु हथियारों की क्षमता से लैस देशों की संख्या बढ़ने में अभी वक्त लगेगा, लेकिन दुनिया की बड़ी ताक़तों को इस चुनौती को गंभीरता से लेने की ज़रूरत है।

इनमें से कई देश अमेरिका के साथ हो गए थे, लेकिन जैसा कि ऊपर बताया गया है कि अब उनमें यह डर बढ़ रहा है कि अमेरिका दूरदराज के सहयोगी देशों का वहां के क्षेत्रीय संघर्ष से पैदा होने वाली चुनौतियों से शायद बचाव न करना चाहे। जर्मनी जैसे देशों में भी परमाणु हथियारों को लेकर बहस तेज हो रही है, जिसकी कुछ साल पहले तो कल्पना तक नहीं की जा सकती थी। इन बातों का मतलब यह नहीं है कि परमाणु हथियारों और क्षमता से लैस देशों की संख्या में बहुत बढ़ोतरी होने जा रही है, लेकिन इसमें भी कोई शक नहीं है कि परमाणु अप्रसार और सहयोगी देशों को अमेरिका की तरफ से मिली सुरक्षा गारंटी को संदेह की नज़र से देखा जा रहा है। परमाणु हथियारों की क्षमता से लैस देशों की संख्या बढ़ने में अभी वक्त लगेगा, लेकिन दुनिया की बड़ी ताक़तों को इस चुनौती को गंभीरता से लेने की ज़रूरत है।

परमाणु भू-राजनीति का संक्षिप्त इतिहास

यद्यपि शीत युद्ध के वैश्विक शक्ति संघर्ष में परमाणु ऊर्जा का उपयोग करने के लिए कुछ पहलों की मांग की गई थी, असैनिक परमाणु प्रौद्योगिकी ने भू-राजनीतिक संघर्षों के साथ अपने जुड़ाव को आगे बढ़ाने के लिए संघर्ष किया है, जिसने कई आबादी की ऊर्जा जरूरतों के बावजूद दुनिया भर में इसके विकास को बाधित किया है। और कार्बन मुक्त ऊर्जा स्रोत के रूप में परमाणु ऊर्जा की अपनी क्षमता। यह कहना नहीं है कि असैन्य परमाणु प्रौद्योगिकी को अलग करने या सैन्य परमाणु प्रौद्योगिकी को नियंत्रित करने का कोई प्रयास नहीं किया गया। वास्तव में, द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के तुरंत बाद, शीत युद्ध के दोनों पक्षों में विभिन्न प्रस्ताव थे जो परमाणु हथियारों की दौड़ को या तो सीमित कर देते या उलट

देते। कार्यान्वयन की विभिन्न चिंताओं के कारण ये पहलें आंशिक रूप से ध्वस्त हो गईं - उनमें से सबसे महत्वपूर्ण सत्यापन - और पूर्व-पश्चिम संघर्ष की व्यापक अनिवार्यताएं, जो इसके बजाय हथियारों की दौड़ का विस्तार करने के लिए लग रहा था। इन चुनौतियों के प्रति अमेरिका की प्रतिक्रिया ऐसी किसी भी जानकारी को साझा करने पर रोक लगाने की कोशिश करना था जो दूसरों को यू.एस. में अनुसरण करने की अनुमति दे सकती थी। परमाणु हथियार उत्पादन का रास्ता। 1946 का परमाणु ऊर्जा अधिनियम इसके विभिन्न प्रावधानों में हड़ताली है, जो न केवल परमाणु प्रौद्योगिकी से जुड़े उपकरण और सामग्री के प्रसार को रोकने की मांग करता है बल्कि अंतर्निहित वैज्ञानिक डेटा भी है। अधिनियम की धारा 10 (बी) (1) ने "प्रतिबंधित डेटा" को परिभाषित किया - जिसे नवगठित परमाणु ऊर्जा आयोग (एईसी) द्वारा नियंत्रित किया जाना था, जिसे बाद में भंग कर दिया गया था और एक संक्षिप्त अवधि के बाद नए अमेरिकी ऊर्जा विभाग में शामिल किया गया था। एनर्जी रिसर्च एंड डेवलपमेंट एडमिनिस्ट्रेशन (ERDA) - "परमाणु हथियारों के निर्माण या उपयोग से संबंधित सभी डेटा, fssionable सामग्री के उत्पादन या बिजली के उत्पादन में fssionable सामग्री के उपयोग" के रूप में। AEC को प्रसार के लाइसेंस के लिए अधिकार दिया गया था जानकारी लेकिन बहुत सख्त पाबंदियों के तहत। प्रतिबंधित डेटा का खुलासा करने के लिए दंड भी गंभीर थे, किसी भी व्यक्ति के लिए पांच-फर्ज मौद्रिक फ़ेंस से लेकर दस से बीस साल तक की जेल से लेकर मृत्युदंड तक, जो "संचारित, प्रसारित या प्रकट करता है [प्रतिबंधित डेटा के विभिन्न रूप], इरादे से संयुक्त राज्य अमेरिका को घायल करने के लिए या किसी विदेशी राष्ट्र के लिए लाभ सुरक्षित करने के इरादे से।"3 1950 के दशक में एक अलग मानसिकता उभरी। 1953 में जब राष्ट्रपति ड्वाइट आइजनहावर ने पदभार संभाला, तब तक सोवियत संघ ने अपने पहले परमाणु हथियार का परीक्षण कर लिया था, जैसा कि यूनाइटेड किंगडम ने किया था। आइजनहावर प्रशासन ने महसूस किया कि, हालांकि परमाणु प्रसार एक गंभीर चिंता का विषय था, लेकिन राज्य के सचिव डलेस के शब्दों में, "बांध ... सूचना का प्रवाह" और अन्य राज्यों द्वारा इसके शोषण पर रोक लगाना तेजी से असंभव था। 4 नतीजतन, उन्होंने निर्धारित किया कि उन्हें इसकी आवश्यकता है दृष्टिकोण बदलने के लिए।

यह एक महत्वाकांक्षी प्रस्ताव के साथ शुरू हुआ, जिसे राष्ट्रपति आइजनहावर ने दिसंबर 1953 में संयुक्त राष्ट्र महासभा की बैठक में संक्षेप में रेखांकित किया। इसके केंद्र में अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (आईएईए) बनाने का विचार था, जिसका जनादेश असैन्य परमाणु प्रौद्योगिकी की क्षमता का पता लगाना होगा। उन्होंने स्पष्ट रूप से नोट किया:

संयुक्त राज्य अमेरिका जानता है कि परमाणु ऊर्जा से शांतिपूर्ण शक्ति भविष्य का सपना नहीं है। वह क्षमता, जो पहले ही सिद्ध हो चुकी है, यहाँ—अभी—आज है। कौन संदेह कर सकता है, अगर दुनिया के वैज्ञानिकों और इंजीनियरों के पूरे शरीर में उनके विचारों का परीक्षण और विकास करने के लिए उपयुक्त सामग्री की पर्याप्त मात्रा थी, कि यह क्षमता तेजी से सार्वभौमिक, कुशल और आर्थिक उपयोग में बदल जाएगी?

IAEA का मिशन और कार्य समय के साथ कुछ अलग हो गए, और वास्तव में परमाणु ईंधन भंडार के रूप में सेवा करने की अवधारणा 2000 के दशक तक निष्क्रिय थी। हालांकि, इसके केंद्र में, उन देशों को सक्षम करने की अवधारणा थी जो उन्नत परमाणु शक्तियों में से नहीं थे, वे विभिन्न प्रकार के उपयोगों के लिए परमाणु युग का लाभ उठा सकते थे और यह सुनिश्चित कर सकते थे कि परमाणु सुविधाओं को नागरिक से सैन्य उपयोगों में परिवर्तित नहीं किया गया था। संयुक्त राज्य अमेरिका ने इस प्रयास को अपने स्वयं के राष्ट्रीय कार्यक्रम के माध्यम से बढ़ाया, जिसे "शांति के लिए परमाणु" कहा जाता था। राष्ट्रपति आइजनहावर के भाषण को एक दिन यह कहा जाएगा। इस कार्यक्रम में अनुसंधान रिएक्टरों सहित दुनिया भर के राज्यों को परमाणु प्रौद्योगिकी प्रशिक्षण और उपकरण प्रदान करना शामिल था। इसने विभिन्न देशों के वैज्ञानिकों को परमाणु विज्ञान के बारे में अधिक जानने और अपना योगदान देना शुरू करने की अनुमति दी। यह 1954 में मूल 1946 के परमाणु ऊर्जा अधिनियम (AEA) के संशोधन में निहित था, जिसने "परमाणु प्रौद्योगिकी और सामग्री निर्यात की अनुमति दी थी यदि प्राप्तकर्ता देश हथियार विकसित करने के लिए उनका उपयोग नहीं करने के लिए प्रतिबद्ध

थे।"6 इस नीति के कारण सैकड़ों लोगों को प्रशिक्षण मिला। उद्योग और शिक्षा जगत के विदेशी विशेषज्ञ,7 साथ ही दर्जनों देशों के साथ परमाणु सहयोग समझौते के निष्कर्ष। एईए ने घरेलू स्तर पर असैन्य परमाणु विकास में अमेरिकी निवेश को भी तेज किया। यह आइजनहावर प्रशासन नीति के अनुरूप था जिसने परमाणु ऊर्जा को आर्थिक विकास के संभावित भावी चालक के रूप में देखा था। 10, संयुक्त राज्य अमेरिका अकेला नहीं था, और दिलों और दिमागों के लिए वैश्विक प्रतिस्पर्धा में शांति के लिए परमाणुओं की भूमिका थी। सोवियत संघ ने 1954 में अपना पहला परमाणु ऊर्जा रिएक्टर बनाया, जिसने सोवियत ग्रिड में बिजली का योगदान दिया।11, वहां से, इसने अपनी अंतरराष्ट्रीय परमाणु उपस्थिति का विस्तार करने की मांग की, जिसमें उन देशों12 को रिएक्टर निर्यात करना शामिल था जो इसकी भू-राजनीतिक कक्षा के भीतर थे। 1975 तक, 55 देशों में 373 अनुसंधान रिएक्टर काम कर रहे थे, और 1980 और 1990 के दशक में, दुनिया भर में संख्या दोगुनी से अधिक हो गई।

निष्कर्ष

दुनिया की बड़ी ताक़तों के बीच आज इस मुद्दे पर सर्वसम्मति नहीं है। परमाणु अप्रसार को बढ़ावा देने और उसे जारी रखने को लेकर उनके बीच टकराव बढ़ रहा है। यह दुनिया में सत्ता के संतुलन में आए बदलाव की वजह से हो रहा है। वैश्विक और क्षेत्रीय स्तर पर 'बैलेंस ऑफ पावर' में बदलाव का मतलब यह है कि इस मामले पर सबके बीच सहमति बनाने में और मुश्किल होगी। यानी नियमों पर आधारित परमाणु अप्रसार व्यवस्था के लिए खतरा बढ़ रहा है। पिछले कुछ दशकों से परमाणु अप्रसार व्यवस्था इस मर्ज का शिकार रही है। दुनिया की बड़ी ताक़तों के बीच इस मुद्दे पर सहमति न बन पाने से इस व्यवस्था को मज़बूत बनाने की प्रक्रिया प्रभावित हुई है। परमाणु अप्रसार के शुरुआती दिनों में भी कई संकट खड़े हुए थे। तब बड़ी ताक़तें इस व्यवस्था को मज़बूत बनाने के लिए आपसी मतभेद को अलग रखने को तैयार थीं। आज के राजनीतिक माहौल में ऐसी स्थिति नहीं दिख रही है, जबकि ताक़तवर देशों ने माना है कि इस मामले में उनके आधिकारिक रुख में कई कमियां हैं। हालांकि, वे ठोस रणनीति बनाकर उन्हें दूर करने में असफल रहे हैं। यह समस्या सिर्फ़ परमाणु अप्रसार से ही नहीं जुड़ी है, लेकिन सिर्फ़ इसी वजह से हम हाथ पर हाथ रखकर नहीं बैठ सकते। अमेरिका के नेतृत्व वाले पश्चिमी देशों और रूस-चीन का खेमा इसके लिए किसी भी नीति पर आम सहमति बनाने में असफल रहा है। इससे अनिश्चितता की स्थिति बनी है और फैसले नहीं हो रहे हैं। मिसाल के लिए, दुनिया की बड़ी ताक़तों के बीच न्यूक्लियर ऑर्डर में भारत की स्थिति क्या होगी, इसे लेकर मतभेद हैं। 2000 के दशक के मध्य में अमेरिका ने भारत के स्टेटस को लेकर अपनी नीति बदली थी। उसने भारत के साथ न्यूक्लियर डील की, जिसे चीन को छोड़कर दुनिया की दूसरी सभी बड़ी ताक़तों ने स्वीकार किया था। इससे न सिर्फ़ चीन और भारत के संबंध प्रभावित हुए बल्कि अमेरिका और चीन के रिश्तों पर भी इस फैसले की आंच पड़ी। परमाणु अप्रसार व्यवस्था पर अभी भी दुनिया के ताक़तवर देशों का दबदबा है। इसलिए मौजूदा मुश्किलों का हल निकालने की ज़िम्मेदारी भी उन पर है।

संदर्भ

[1] लियो स्ज़ीलार्ड: जीवनी। काउंसिल फॉर ए लिवेबल वर्ल्ड वेब साइट। यहां उपलब्ध है: http://www.clw.org/about/szilard। 20 जून 2007 को एक्सेस किया गया।

[2] श्वार्ट्ज एसआई। परमाणु लेखापरीक्षा: 1940 से अमेरिकी परमाणु हथियारों की लागत और परिणाम। वाशिंगटन, डीसी: ब्रुकिंग्स इंस्टीट्यूट प्रेस; 2012।

[3] रोड्स आर। परमाणु बम का निर्माण। न्यूयॉर्क, एनवाई: साइमन एंड शूस्टर; 1986:394–442।

[4] लैमोंट एल। ट्रिनिटी का दिन। न्यूयॉर्क, एनवाई: एथेनियम; 2012।

[5] योकोरो के, कामदा एन। परमाणु हथियारों के उपयोग के सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रभाव। इन: लेवी बीएस, सिडेल वीडब्ल्यू, एड। युद्ध और सार्वजनिक स्वास्थ्य। (अद्यतन पेपरबैक संस्करण)। वाशिंगटन, डीसी: अमेरिकन पब्लिक हेल्थ एसोसिएशन; 2000:65–83।

[6] रोड्स आर। डार्क सन: द मेकिंग ऑफ द हाइड्रोजन बम। न्यूयॉर्क, एनवाई: साइमन एंड शूस्टर; 2012।

[7] एनपीटी की ताकत और कमजोरियों के लिए, "वैश्विक परमाणु अप्रसार व्यवस्था" देखें, विदेश संबंध परिषद, 21 मई, 2012।

[8] परमाणु हथियार राज्य (एनडब्ल्यूएस) परमाणु अप्रसार संधि (एनपीटी) के तहत मान्यता प्राप्त पांच परमाणु हथियार राज्य हैं।

[9] हेनरिक सालेंडर, "एक समीक्षा सम्मेलन की समीक्षा: क्या कभी एक सफल एनपीटी रेवकॉन हो सकता है?", यूरोपीय नेतृत्व नेटवर्क, जून 8, 2015।

[10] "परमाणु अप्रसार संधि, गैर-कार्यान्वित, राज्यों के लिए 'निरस्त्रीकरण उपाय सम्मिलित करने' के लिए 'स्थान-धारक' बन जाता है, पहली समिति ने बताया," जीए/डीआईएस/3507, महासभा की पहली समिति, उनहत्तरवें सत्र, 13वीं बैठक, अक्टूबर 21, 2014।

[11] राजेश्वरी पिल्लई राजगोपालन और अर्का विश्वास, "भारत और NPT को एक दूसरे की आवश्यकता है", द डिप्लोमैट, 18 अगस्त, 2015।

[12] "प्रश्न #1: अप्रसार संधि क्यों महत्वपूर्ण है? —जॉन पी। होल्ड्रेन", प्रेस विज्ञप्ति, बेलफर सेंटर फॉर साइंस एंड इंटरनेशनल अफेयर्स, हार्वर्ड यूनिवर्सिटी, 26 अप्रैल, 2005।

[13] भारत के प्रयासों और अंतर्राष्ट्रीय परमाणु व्यवस्था के साथ नई दिल्ली के एकीकरण के गुणों और दोषों पर, राजेश्वरी पिल्लई राजगोपालन और अर्का बोसवास देखें, "वैश्विक अप्रसार वास्तुकला के भीतर भारत का पता लगाना: संभावनाएँ, चुनौतियाँ और अवसर", ओआरएफ मोनोग्राफ, 2016।

[14] राजेश्वरी पिल्लई राजगोपालन, "भारत की एनएसजी क्वेस्ट: एक वास्तविकता की जांच", विज्ञान, प्रौद्योगिकी और सुरक्षा फोरम, 30 नवंबर, 2016; राजेश्वरी पिल्लई राजगोपालन और अर्का बिस्वास, "परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह के लिए भारत की सदस्यता", ओआरएफ अंक संक्षिप्त संख्या। 141, मई 2016।

[15] रेबेका डेविस गिबन्स, "परमाणु अप्रसार खतरे में है, और अमेरिकी राष्ट्रीय सुरक्षा भी खतरे में है", वाशिंगटन पोस्ट, 14 फरवरी, 2015।

[16] एलेक्जेंड्रा होमोलर, "संकट में बहुपक्षवाद? द कैरेक्टर ऑफ़ यूएस इंटरनेशनल एंगेजमेंट अंडर ओबामा," ग्लोबल सोसाइटी 26, सं। 1, (2012): 103-122।

[17] सारा शिराजयान, "प्रतिप्रसार: 'ताकत का तालमेल': WMD प्रसार को रोकने में क्षेत्रीय संगठनों की भूमिका बढ़ाने के लिए एक रूपरेखा", आर्म्स कंट्रोल टुडे, सितंबर 2018।